सम्राट् अकबर की जैन धर्म में रुचि

□ श्री संजय कुमार जैन

प्राचीन भारतीय साहित्य के प्रति विदेशियों का जिज्ञासाभाव सदैव से रहा है। कुछ धर्मान्धि आक्रान्ताओं एवं विजयी शासकों ने भारतीय साहित्य की अमूल्य निधियों को अग्नि में समर्पित करके अपनी धर्मपरायणता एवं शक्ति का प्रदर्शन करने में भले ही गौरव या अहंकार का अनुभव किया हो किन्तु विदेशियों के बड़े दल ने सहस्राब्दियों से भारतीय विद्याओं के प्रचार-प्रसार एवं संरक्षण में अभूतपूर्व योगदान दिया है।

महान् मुग़ल अकबर तो वास्तव में भारतीय आत्मा का सजीव प्रतीक था। भारतीय साहित्य एवं सन्तों के नैकट्य ने उसे अत्यधिक उदार बना दिया था। गुणग्राही अकबर ने असंख्य पुस्तकें संकलित की थीं। जिनमें तत्कालीन भारत में प्रचलित सभी धर्मों की दुर्लभ पांडुलिपियां थी। सुप्रसिद्ध इतिहासज्ञ विसेन्ट ए० स्मिथ के अनुसार अकबर द्वारा स्थापित पुस्तकालय की न उस समय कोई समता थी और न ही वर्तमान में। अकबर की मृत्यु के उपरान्त आगरा दुर्ग की सुरक्षित निधि-कोष की तालिका में २४००० पुस्तकों का उल्लेख मिलता है। इतिहासवेत्ता श्री स्मिथ के अनुसार प्रत्येक पुस्तक का औसत मूल्यांकन, वर्णितविनिमय दर के अनुसार २७ से ३० पौण्ड तक आता था। इस प्रकार से पुस्तकों का मूल्य ६४६७३ से लेकर ७३७१६६ पौण्ड तक होता है।

इस से अद्भुत एवं बहुमूल्य ग्रन्थालय में जैन धर्म से सम्बन्धित प्राचीन धर्मग्रन्थों का बड़ी संख्या में होना स्वाभाविक था, क्योंकि जैन सन्तों का परम्परा रूप में मुगल शासकों से मधुर सम्बन्ध होने के ऐतिहासिक संकेत मिलते हैं। उदाहरण के लिए अकबर के द्वारा विशेष रूप से सम्मानित जैन विद्वान् पद्मसुन्दर के दादा गुरु श्री आनन्दमेरू जी का भी अकबर के पिता एवं पितामह हुमायूं और बाबर से सत्कार सम्मान ग्रहण करने का अकबर शाह शृंगार दर्पण की प्रशस्ति में उल्लेख मिलता है।

स्वयं सम्राट् अकबर का जैन सन्तों के प्रति समादर भाव था। इसीलिए उसने अपने गुजरात के राजकीय प्रतिनिधि के माध्यम से जैन सन्त हीरविजय को राजमहल में पधारने का निमन्त्रण भिजवाया था। मुनि श्री हीर विजय ने शाही उपहारों को अस्वीकार करते हुए भी लोककल्याणार्थ फतहपुर सीकरी जाना स्वीकार कर लिया था। बादशाह ने उनके पधारने पर शाही स्वागत किया था। धर्म एवं दर्शन के संबंध में मुनिश्री जी से सम्राट् अकबर एवं प्रमुख दार्शनिकों में गहरा विचार विमर्श हुआ था। मुनिश्री हीरविजय जी से प्रभावित होकर ही सम्राट् अकबर ने १५८२ ई० में कैदखानों के बन्दियों तथा पिंजरों में बन्द पक्षियों को मुक्त करने एवं कुछ निश्चित दिनों में पशुओं के वध को वर्जित कर दिया था। आगामी वर्ष १५८३ ई० में इन आदेशों में संशोधन कर दिया गया और उनका उल्लंघन करने पर प्राणदंड नियत कर दिया गया। सम्राट् अकबर ने अपना बहुप्रिय आखेट त्याग दिया और मछली का शिकार भी सीमित कर दिया।

अकबर के दरबार में धर्मपुरुष श्री भानचन्द एवं श्री सिद्धिचन्द की निरन्तर उपस्थिति एवं राजदरबारियों का उनके प्रति असाधारण सम्मानभाव इस तथ्य का द्योतक है कि मुगल सम्राट् अकबर के उदार शासन में जैन धर्म निरन्तर वृद्धि पर था। तत्कालीन इतिहासवेत्ताओं ने अकबर के उपासनागृह में जिन धर्मों के प्रतिनिधियों का उल्लेख किया है, उनमें भी जैनियों के दोनों सम्प्रदायों का उल्लेख प्राप्त होता है। अतः महान् अकबर के ग्रन्थागार में जैनधर्म से सम्बन्धित पांडुलिपियों का बड़ी संख्या में होना स्वाभाविक है। सम्राट् अकबर ने स्वयं मुनिश्री हीरविजय को एक हस्तलिखित धर्मग्रंथ की पांडुलिपि भेंट की थी। पुस्तक भेंट के समय मुनिश्री हीरविजय ने स्वयं आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा था कि शाही ग्रन्थालय में इतने धर्मग्रन्थ कैसे एकत्र हो गए हैं।

सम्राट् अकबर की मृत्यु के पश्चात् उसका ग्रन्थालय किस-किस शासक के अधिकार में गया और उन्होंने उन पांडुलिपियों का क्या-क्या उपयोग किया? इस विषय पर यदि कुछ विशेष जानकारी मिल पाए तो भारतीय साहित्य की अनेक अज्ञात कड़ियों पर प्रकाश पड़ने की सम्भावना है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org